चित्त की स्थिरता ही योग

- ब्र.कु. विश्वनाथ

सुदीर्घ के मन में प्रश्नों के अंबार लगे थे। उसका मन शीघ्र ही इन प्रश्नों के उत्तर चाहता था। वह अपनी जिज्ञासा राजा जनक के सम्मुख रखता, इससे पूर्व विगत दो दिनों में घटे घटनाक्रम उसकी आँखों के सम्मुख गुज़र गए। सुदीर्घ ऋषि याज्ञवल्क्य का प्रिय शिष्य था। यज्ञ के विज्ञान के प्रणेता, कर्मकांड की अनेक वल्लियों को प्रतिपादित करने वाले दुर्द्धर्ष तपस्वी याज्ञवल्क्य का नाम संपूर्ण आर्यावर्त में सम्मान के साथ लिया जाता था। यह समय वह था, जब तप एवं योग, दो घोषित भिन्न धाराओं के रूप में स्थापित हो चुके थे। स्वाभाविक था कि शिष्यों के मन में यह प्रश्न उभरता कि दोनों में श्रेष्ठ क्या है?

अपने मन का यही प्रश्न दो दिन पूर्व सुदीर्घ ने ऋषि याज्ञवल्क्य के सम्मुख रखा। उसका प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्य थोड़ा हँसे, फिर गंभीर हो गए। उत्तर देने के स्थान पर उन्होंने सुदीर्घ से ही प्रश्न कर डाला- ''वत्स! तुम्हारा कभी पर्वतशिखर पर जाना हुआ है?'' उत्तर हाँ में मिलने से उन्होंने सुदीर्घ से कहा-''तुम जब पर्वतशिखर पर पहुँचे होगे तो तुमने देखा होगा कि शिखर तक पहुँचने वाले मार्ग अनेकों हैं। प्रश्न उनकी श्रेष्ठता का नहीं, उनकी परणति का होता है। यदि मार्ग गंतव्य तक ले जाता है तो वह श्रेष्ठ ही है और योग एवं तप, दोनों मार्ग आध्यात्मिक उत्कर्ष तक ले जाते हैं।''

थोड़ा रुककर याज्ञवल्क्य आगे बोले- ''किंतु तुम्हारे मन में यह जिज्ञासा उठना भी स्वाभाविक है। प्रारंभिक दिनों में ऐसा निर्धारण कर पाना संभव नहीं हो पाता है। और सत्य बात तो यह है कि एक बार आध्यात्मिक उत्कर्ष के शिखर पर पहुँच जाने पर दोनों में से कौन सी धारा उत्तम है, इस तरह का भाव ही मन से समाप्त हो जाता है। जो तपस्वी है, वही योगी भी है और कोई योगी बिना अपने को तपाए योग के शिखर पर भी नहीं पहुँचता।''

याज्ञवल्क्य सुदीर्घ की ओर देखते हुए बोले- ''पुत्र! तुमने अपना अधिकांश जीवन मेरे सानिध्य में बिताया है और तपस्या का वातावरण अपने चारो ओर देखा है। इस प्रश्न का सही-सही उत्तर अनुभव करने के लिए आवश्यक है कि तुम योग शिखर पर आरुढ़ व्यक्तित्व को भी निकट से देखो।''

सुदीर्घ ने इस आशय से कि याज्ञवल्क्य किसी प्रसिद्ध ऋषि का नाम योगी के रूप में लेंगे, उनकी ओर देखा। याज्ञवल्क्य सुदीर्घ की मंशा को भाँपते हुए बोले-'' तुम्हें मिथिला जाना होगा। वहाँ के राजा जनक योग के शिखर पर आरुढ़ एक ऐसे व्यक्तित्व हैं, जिनके जीवन में तुम चित्त की अचंचलता एवं व्यक्तित्व की समग्रता को सहजता से अनुभव कर सकते हो।''

सुदीर्घ का मन प्रश्नों से भर गया। उसे लगा कि ''एक राजा! एक राजा कैसे योगी बन सकता है?'' याज्ञवल्क्य सुदीर्घ के मन में चल रहे प्रश्नों से पूर्णतया परिचित थे। वे बोले-''वत्स! जो तुम सोच रहे हो, उसका सही उत्तर तुम्हें जनक से मिलने पर ही ज्ञात होगा।''

दो दिन पुराने इस वार्तालाप को सुदीर्घ अपनी आँखों के सामने घटता देख रहा था। इसके बाद उसे याद आया कि वह राजा जनक से मिलने मिथिला पहुँचा हुआ है। राजप्रहरी उसे राजदरबार में ले गया। वहाँ एक सामान्य दरबार जैसा ही वातावरण था। कहीं न्याय के इच्छुक नागरिक खड़े थे तो कहीं राजनर्तकी संगीत पर नृत्य कर रही थी। चारो ओर कोलाहल का वातावरण था। सुदीर्घ ने सोचा- ''भला ऐसे वातावरण में योग कैसे सधता होगा?'' वह यह सोच ही रहा था कि राजप्रहरी ने उसे राजा जनक के सम्मुख खड़ा कर दिया।

इतने सारे कोलाहल के बीच राजा जनक का व्यक्ति सम्मोहित कर देने वाला था। वे जैसे राज दरबार में थे भी और नहीं भी। उनके चारो ओर नगाड़े बज रहे थे, कोलाहल था, सांसारिक कामनाओं की पूर्ति की इच्छा रखने वाले अनेक लोग थे, परंतु वे सबसे अछूते थे। सुदीर्घ के यह बताने पर कि उसे ऋषि याज्ञवल्क्य ने भेजा है, राजा जनक ने अपने आसन से उठकर उसको सम्मानपूर्वक नमन किया।

''यहाँ कैसे आना हुआ ऋषिपुत्र?''-राजा जनक ने पूछा। सुदीर्घ ने उसके ऋषि याज्ञवल्क्य से हुए वार्तालाप के विषय में बताया। राजा जनक मंद स्मित के साथ बोले- ''यह तो ऋषिवर की महानता है कि उन्होंने मुझे योगी समझा। मैं तो एक साधारण-सा व्यक्ति हूँ जिसे प्रभु ने इस स्थान पर लाकर बिठा दिया है। यदि वे मुझे वन में भी रखते तो मैं वहाँ पर भी संतुष्ट ही होता।''

राजा जनक के कथन को सुनते ही सुदीर्घ का मन प्रश्नों से भर गया। उसे लगा कि भला ऐसा कर पाना यहाँ कैसे संभव है? सुदीर्घ ने समय न गँवाते हुए अपना प्रश्न राजा जनक के समक्ष रख दिया। उसने पूछा- ''महाराज! आपके आस-पास का वातावरण पूर्णतया सांसारिक होते हुए भी आप अपने चित्त को स्थिर कैसे रखते हैं? मैंने पढ़ा है कि चित्त की स्थिरता ही योग है। वह योग-साधना इस वातावरण में कैसे संभव है?''

राजा जनक बोले- '' साधना की सिद्धि ही यही है कि वह वातावरण से बिना प्रभावित हुए की जा सके। यदि उसे एक विशेष परिवेश अथवा परिस्थिति में ही किया जा रहा हो तो फिर उसका महत्व उस परिवेश जितना ही है, उससे ज़्यादा नहीं। जहाँ तक आपके इस प्रश्न का संबंध है, तो उसका उत्तर मैं सायंकाल में बेहतर दे पाऊंगा। इस अवधि में आप मेरी राजधानी देखकर क्यों नहीं आते? आपका यहाँ पहली बार आना हुआ है, यहाँ के समस्त स्मारकों को देख आएँ तो अच्छे से बैठ कर बात की जा सकेगी।''

सुदीर्घ को लगा कि राजा जनक उसके प्रश्न का उत्तर देने से बचना चाह रहे हैं। वह कुछ बोलता, इससे पूर्व ही राजा जनक बोले-''आप नगर भ्रमण पर निकलते समय यह तेल से भरा कलश साथ लेते जाएँ। यह ऊपर तक भरा हुआ है। वैसे तो कोई विशेष बात नहीं है, परन्तु यदि इस कलश से एक बूंद भी नीचे गिर जायेगी तो आपके पीछे चल रहा प्रहरी आपका सिर तलवार से कलम कर देगा। उसे मैंने ऐसा आदेश दिया है।''

सुदीर्घ का हृदय उसके हाथों में आ गया। उसे लगा कि वह किस संकट में फँस गया है। वह तो साधारण सा प्रश्न लेकर आया था, पर यह तो जीवन-मरण का प्रश्न बन गया। राजाज्ञा की अवहेलना भी संभव नहीं थी, सो वह नगर भ्रमण पर निकला और सायंकाल लौटा। राजा जनक वहीं दरबार में उसी निश्चिंतता के साथ बैठे थे और उन्होंने सुदीर्घ को देखकर पुनः आदरपूर्वक नमस्कार किया।

''राजधानी में आपने क्या-क्या देखा ऋषिपुत्र?''- राजा जनक ने प्रश्न किया। सुदीर्घ ने उत्तर देने से पूर्व हाथ का कलश भूमि पर रखा और बोला-''क्या देखता राजन्! मेरी सारी दृष्टि तो उस कलश पर टिकी थी। आपने भी मुझे कैसे धर्मसंकट में डाल दिया।'' राजा जनक बोले- ''यदि आपकी दृष्टि कलश पर थी तो आपको आपके प्रश्न का उत्तर भी मिल गया होगा।''

सुदीर्घ ने कहा- ''वह कैसे?'' राजा बोले- ''जैसे नगर के मध्य होते हुए भी आपकी दृष्टि कलश पर स्थिर थी, वैसे ही राजसिंहासन पर होते हुए भी योगी की दृष्टि अपने गंतव्य पर स्थिर रहती है। जिसके लिए सम्मान और अपमान, राग और द्वेष, सुख और दुःख- एक समान हो जाते हैं; जो संसार के आकर्षणों और उपद्रवों के मध्य भी उसी परमपिता के प्रेम में निमग्न रहता है, वही योगी है।''

राजा जनक बोले-''ऋषिपुत्र! सामान्य व्यक्ति यह सोचता है कि योग अथवा तप, संसार से भागकर प्राप्त किए जा सकते है; जबकि संसार हो अथवा सन्यास, ये दोनों ही मनःस्थितियाँ हैं। यदि किसी के मन में संसार है तो वह हिमालय के शिखर पर भी आसक्ति के कारण दूँढ़ लेगा और यदि किसी के मन में सन्यास है तो वह जग के कोलाहल के मध्य भी स्थितप्रज्ञ ही कहलाएगा। यही दोनों पथों का सार है।''

एक जीवंत उदाहरण ने सुदीर्घ के प्रश्नों के अंबार को शांत कर दिया। उसे भान हो गया था कि पथ कोई भी हो, जब तक अंतर्मन प्रभु को समर्पित नहीं होता, मन समस्त बंधनों से मुक्त नहीं होता, तब तक बाहर के सारे आडंबर व्यर्थ हैं, बेमानी हैं। मन की शांति ही सच्ची शांति है और यह उपलब्ध हो जाए तो राजमहल हो या वन क्षेत्र, चित्त सदा शांत, नीरव व निरुद्ध ही रहता है।

नकुड़-उ.प्र.। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में दीप प्रज्वलित करते हुए शगुफ्ता खान,राज्य मंत्री सलाहकार,महिला एवं बाल विकास,उ.प्र., वंदना शर्मा,सी.ओ.,अंडर ट्रेनिंग,उ.प्र. पुलिस, ब्र.कु. संगीता, डॉ. शशि जैन तथा अन्य गणमान्य अतिथिगण।

ओ.आर.सी.-गुरूग्राम। महाशिवरात्रि पर आयोजित कार्यक्रम में अपने विचार व्यक्त करते हुए रंधीर सिंह,विधायक,कपरीवास,रेवाड़ी। साथ हैं ब्र.कु. मधु, ब्र.कु. संजीवनी तथा अन्य।

नारनौल-हरियाणा। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में दीप प्रज्वलित करते हुए प्रिन्सीपल निधि वर्मा, उषा बहन,मेम्बर,कन्ज़्यूमर फोरम, सरिता यादव, सेक्रेट्री,सोल्जर बोर्ड,पूर्व लेफ्टिनेंट,कर्नाल, ब्र.कु. रतन, उषा रानी,डी.पी.आर.ओ., आशा शर्मा,सी.डी.पी.ओ., डॉ. पोद्दार तथा ब्र.कु. कमल।

नूह-हरियाणा। होली स्नेह मिलन कार्यक्रम में दीप प्रज्वलित करते हुए ब्र.कु. संजय, ब्र.कु. जगदीश, ब्र.कु. परवीन, ब्र.कु. इंदिरा, ब्र.कु. बिन्दु, अतिथि अशोक गोयल तथा अन्य।

पलवल-हरियाणा। सेवाकेन्द्र में आने पर नगरपरिषद अध्यक्षा इन्दू भारद्वाज को ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए ब्र.कु. सरला। साथ हैं ब्र.कु. सुदेश तथा ब्र.कु. सुनीता।

राँची-चौधरी बगान(झारखण्ड)। होली मिलन समारोह का दीप प्रज्वलित कर उद्घाटन करते हुए डी.के. सिन्हा,महाप्रबंधक,जे.एस.डब्ल्यू. स्टील लि., डॉ. रीना सेनगुप्ता, वाई.एम. शुक्ला,सहायक नियंत्रक,रक्षा लेखा, ब्र.कु. निर्मला, सीमा डे,प्रोफेसर,गृह विज्ञान विभाग तथा ज्योतिर्मय घोष,वैज्ञानिक,लाह रिसर्च सेंटर,नामकुन।